UGC CARE LISTED
ISSN No.2394-5990

संशोधक

वर्ष : ९० • मार्च २०२२ • पुरवणी हिंदी विशेषांक ०३

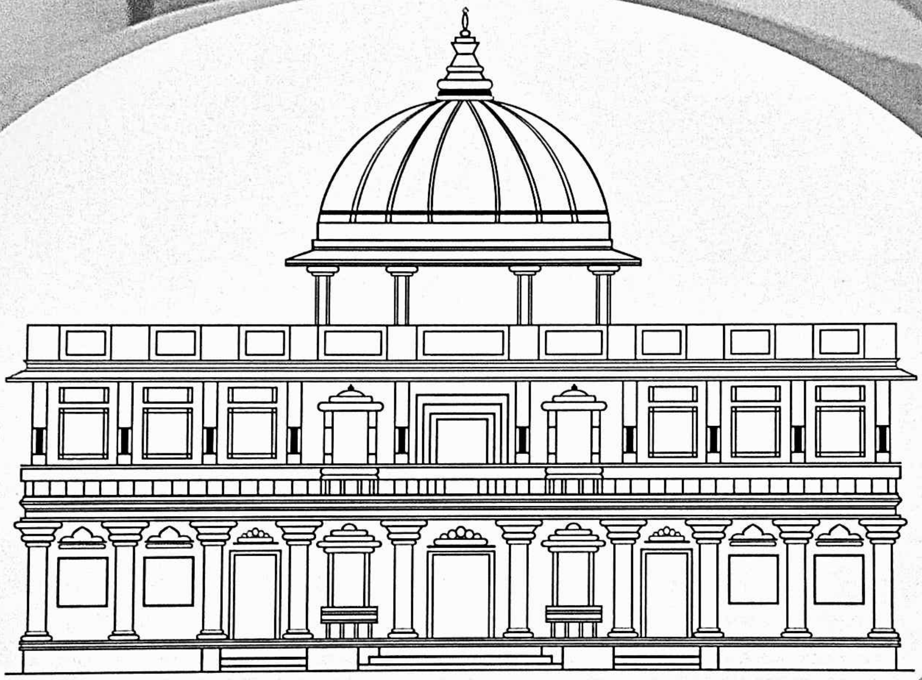

॥ श्री विश्वनाथो विजयते ॥
स्थापना : १ जानेवारी १९१७

इतिहासाचार्य वि. का.राजवाडे संशोधन मंडळ, धुळे

UGC CARE LISTED
ISSN No.2394-5990

संशोधक

• वर्ष : ९० • मार्च २०२२ • पुरवणी हिंदी विशेषांक ०३

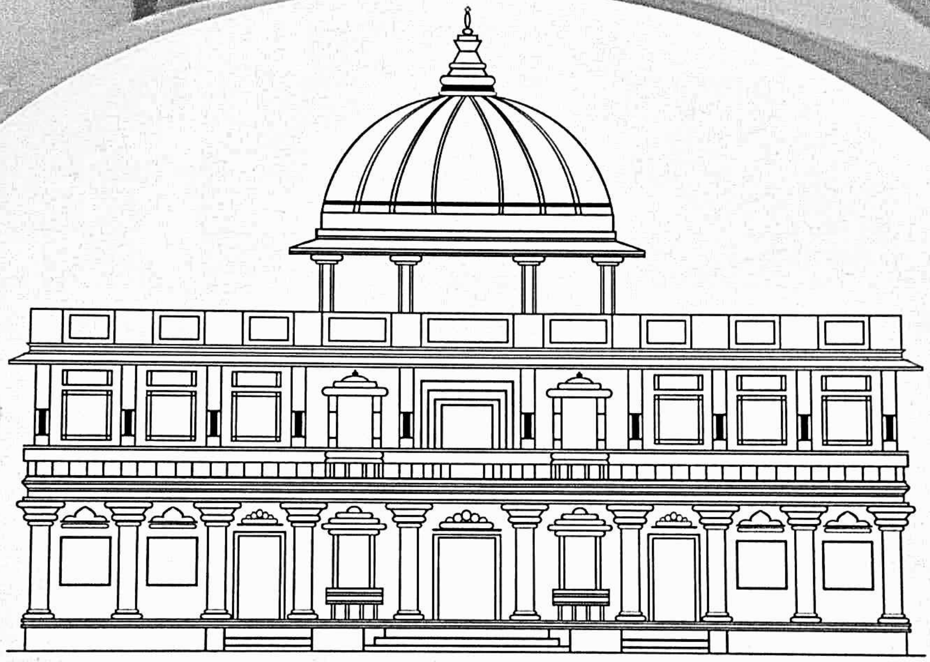

इतिहासाचार्य वि. का.राजवाडे संशोधन मंडळ, धुळे

UGC CARE LISTED
ISSN No.2394-5990

इतिहासाचार्य वि.का.राजवाडे संशोधन मंडळ, धुळे,
या संस्थेचे त्रैमासिक

।। संशोधक ।।

मार्च विशेषांक : २०२२ पुरवणी हिंदी विशेषांक ०३

• संपादक मंडळ •

• प्राचार्य डॉ.सर्जेराव भामरे • प्रा.डॉ.मृदुला वर्मा • प्रा.श्रीपाद नांदेडकर

• अतिथी संपादक •

डॉ. अभयकुमार रमेश खैरनार
डॉ. पंढरीनाथ शिवदास पाटील
डॉ. दिपक दशरथ देवरे
डॉ. निलेश एकनाथ पाटील

• प्रकाशक •

श्री. संजय मुंदडा
कार्याध्यक्ष

इ.वि.का.राजवाडे संशोधन मंडळ, धुळे-४२४ ००१
दूरध्वनी : (०२५६२) २३३८४८, ९४०४५७७०२०

कार्यालयीन वेळ
सकाळी ९.३० ते १.००
संध्याकाळी ४.३० ते ८.०० (रविवारी सुट्टी)

वार्षिक वर्गणी ₹ रु.५००/-
आजीव वर्गणी ₹ ५०००/- (१४ वर्षे)

विशेष सुचना: संशोधक त्रैमासिकाची वर्गणी चेक,ड्राफ्ट वगैरे ''संशोधक त्रैमासिक राजवाडे मंडळ धुळे'' या नावाने पाठवावी

या नियतकालिकेतील लेखकांच्या विचारांशी संपादक मंडळ सहमत असेलच असे नाही.

अ.नं.	लेख एवं लेखकों के नाम	पृ. क्रमांक

२८. डॉ.शशिप्रभा शास्त्री जी का उपन्यास हर दिन इतिहास एवं सांस्कृतिक परिदृश्य/डॉ.महेंद्रकुमार वाढे ,प्रा.राजेंद्र ब्राह्मणे १०५

२९. साहित्य, समाज और सिनेमा की त्रयी में कमलेश्वर की सामाजिक फिल्में/प्रा.डॉ.जयंत ज्ञानोबा बोबडे १०९

३०. जंगल जहाँ शुरू होता है उपन्यास – थारू आदिवासी समाज की वास्तविक गाथा /डॉ.भारती वळवी ११५

३१. भारतीय संस्कृति में 'रामचरितमानस' की प्रासंगिकता/डॉ. कांबळे आशा दत्तात्रय ११८

३२. साहित्य में समाज का प्रतिबिंब/ प्रा.डॉ.वनिता पवार–निकम १२२

३३. हिंदी उपन्यासों में किन्नरों के रीति–रिवाज एवं त्योहार/ डॉ. सविता पुंडलिक चौधरी १२६

३४. साहित्य समाज और संस्कृति/ डॉ.अनिता वेताळ १३०

३५. वीरेन्द्र जैन के उपन्यासों में चित्रित योजना–परियोजना में पिसता किसान/डॉ.के.डी.बागुल १३३

३६. प्रेमचंद की कहानियों में समाज जीवन का चित्रण/ डॉ.रोहिदास गवारे १३६

३७. संत रैदास के काव्य में सामाजिकता/ डॉ.संतोष रायबोले १४१

३८. रामकुमार वर्मा कृत नाटक 'महाराणा प्रताप ': समाज और संस्कृति का सुंदर समन्वय/डॉ.प्रीति सोनी १४५

३९. डॉ.राजेंद्र मिश्र के उपन्यास साहित्य में समसामायिक बोध ('ठहरा हुआ पल' एवं 'अपनी परिधि में' के विशेष संदर्भ में) प्रा. डॉ. प्रमोद गोकुळ पाटील, प्रा. एम. जी. ठाकरे १५०

४०. सुर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' के साहित्य में अभिव्यक्त समाज एवं संस्कृति/प्रा.डॉ.मनोहर पाटील १५४

४१. समाज और संस्कृति से साहित्य का संबंध/डॉ.दिपक पवार १५८

४२. साहित्य का समाज और संस्कृति में योगदान/ डॉ.शेख शहेनाज अहेमद १६१

४३. रामचरितमानस एक अध्ययन/डॉ.भगवान भालेराव १६४

४४. डॉ.कैलाशचंद्र शर्मा के नाटकों में नैतिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों की महत्ता/ डॉ.निंबा लोटन वाल्हे १६८

४५. पंकज सुबीर की कहानियों में सामाजिक चेतना/ डिन्सी जॉर्ज १७१

४६. राजेश जोशी के काव्य में सामाजिकता / प्रा. दिलीप पाटील १७६

४७. डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल के व्यंग्य साहित्य में सामाजिक चेतना/प्रा.डॉ. अभयकुमार खैरनार, प्रा.राजेश खर्डे १७९

४८. डॉ. राजेंद्र मिश्र के उपन्यास 'ठहरा हुआ पल' में सामाजिक तथा सांस्कृतिक चित्रण /प्रा.डॉ.अभयकुमार खैरनार,परमेश्वर बाविस्कर १८२

४९. 'ढलते सूरज की तडप' (सुधा अरोडा की कहानी 'उधडा हुआ स्वेटर' के विशेष संदर्भ में) /प्रा.योगेश पाटील,प्रा.भारती सोनवणे १८६

५०. वर्तमान बालकों का भविष्य – बालसाहित्य एवं समाज / प्रा. अमृता पाटील १९०

५१. जैनेंद्र कुमार और रंगनाथ पठारेजी के साहित्य में सामाजिक मनोविज्ञान / प्रा.डॉ.जयश्री गावीत, प्रा. वंदना जाधव १९३

५२. सुधा अरोडा के साहित्य में समाज और संस्कृति का दर्शन / प्रा.डॉ.प्रमोद पाटील, श्री.राजेंद्र मोरे १९८

५३. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में धीरेन्द्र अस्थाना के उपन्यासों में प्रतिबिंबित महानगरीय समाज/प्रा.डॉ.महेंद्रकुमार वाढे,शरद शेलार...... २०१

“समाज और संस्कृति से साहित्य का संबंध”

डॉ.दीपक विनायकराव पवार
हिन्दी विभाग
दिगंबरराव बिंदू महाविद्यालय, भोकर
मो.९९२३७७७००८

साहित्य के समाज का दर्पण कहा जाता है। वह समाज का ...ब होता है, समाज का मार्गदर्शन तथा लेखा-जोखा है। ...भी राष्ट्र या सभ्यता की जानकारी उसके साहित्य से प्राप्त होती ...हित्य अब लोकजीवन का अंग बन गया है। किसी भी काल ...हित्य से उस समय की परिस्थितियों, जनमानस के रहन-...खान-पान को जाना जाता है। समाज साहित्य को प्रभावित ...ता है। और साहित्य समाज पर प्रभाव डालता है। दोनों एक ...के दो पहलू है। साहित्य समाजरूपी शरीर की आत्मा है। ...लिए वह अजर-अमर है।

साहित्य संस्कृत के ‘सहित’ से बना है। संस्कृत के विद्वानों के ...नुसार साहित्य का अर्थ है- “हितेन सह सहित तस्य भव:” ...र्थात कल्याणकारी भाव। कहा जातात है कि साहित्य लोककल्याण ...के लिए ही सृजित किया जाता है। साहित्य का उद्देश्य मनोरंजन ...करना मा नही है, अपितु इसका उद्देश्य समाज का मार्गदर्शन करना ...है। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त के शब्दों में -

“केवल मनोरंजन न कवि का कर्म होना चाहिए
उसमें उचित उपदेश का भी मर्म होना चाहिए।”[१]

भारतीय संस्कृति की भव्यता, अखंडता औरदीर्घ जीवन का ...रण जीवन में भावना, साहित्य और दर्शन को यथोचित स्थान ...प्रदान करना है। भारतीय साहित्य शास्त्र में इसको ब्रम्हास्वाद सहोदर ...इसलिए कहा गया है कि जिस प्रकार से अध्यात्मिक साधना में ...सत्वोदेक का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है, उसी प्रकार से साहित्य में ...निष्पति सत्वोदेक के बिना संभव नही है। स्वतंत्रता आंदोलन के ...दौरा में भारत की तामसिक चेतना, सुप्त चेतना, निष्क्रिय चेतना को जगा उसे रजोगुण और सत्व गुण से सम्पन्न कर भावना संस्कार के इसी मार्ग को अपनाया गया था। भावना के संस्कार से ही मनुष्य हैवान से इसान बनता है। अज्ञेय ने लिखा है-“चिंतन साहित्य और साहित्यकार को न केवल सीधे-सीधे सामाजिक परिवर्तन से जोड़ता है बल्कि उसे अपना अधिकार समझता है कि साहित्यकार को बताये यकि कौन-सा सामाजिक परिवर्तन सही और वांछनीय है। और इसके लिए वह योजना बनाकर साहित्यकार को देना चाहता है जिस योजना का साहित्यकार की अपनी दृष्टि या अपने विवेक से अत्यान्तिक संबंध होना वह आवश्यक नही मानता। जिन संस्कृतियों में लीला-भाव नही रहता वे उस हद बन्ध्य और स्थितिशील हो जाती है, भले ही गंभीरता उनमें बनी रहे। बल्कि उनकी वह गंभीरता भी परम्परा के आग्रह का रूप ले लेती है। और जिन साहित्यों में लीला भाव नही रहता वे भी स्थितिशील हो जाते है। और उनकी गंभीरता भी रीति और परम्परा के आग्रह का रूप ले लेली है, प्रयोग से कतराती है।”[२]

साहित्य की रचना में समाज की भूमिका की स्वीकृति किसी न किसी रूप में बहुत पहले से ही रही है। साहित्य समाज के संबंधों का उल्लेख करते हुए मैनेजर पाण्डेय कहते है-“समाज से साहित्य का संबंध मान लेना एक बात है और उस संबंध के स्वरूप को ठिक से जानना पहचानना दूसरी बात। जरूरी नही कि जो मानते हों वे जानते भी हों। साथ ही मानने और जानने से अधिक उस संबंध की विश्वसनीय व्याख्या करना। यहीं दृष्टि पद्धति का प्रश्न आता महत्वपूर्ण है।”[३] यदि यह सत्य है कि साहित्य जीवन के यथार्थ का प्रतिबिंब है तो आलोचक के लिए यह स्वाभाविक रूप से विचारणीय

है कि रचनाकार यथार्थ को कितने प्रभावी ढंग से दिखाने में सफल हुआ है। हिंदी आलोचना के अतीत पर नजर डालें तो हम पाएंगे कि भारतेंदु युग में सामाजिक चिंता इसका मुख्य स्वर रहा है। इस संदर्भ में विश्वनाथ लिखते है कि-"सामाजिक दायित्व का निर्वाह हिंदी आलोचना की घुट्टी में पड़ा है। हिंदी आलोचना का उद्भव वैचारिक निबंधों से हुआ। हिंदी के समालोचकों में से अधिकांश पत्रकार थे और उनका सरोकार साहित्य तक ही सिमित न था। हिंदी आलोचना के विकास का युग स्वाधीनता का युग है। इसने हिंदी आलोचना की प्रकृति को स्वस्थ सामाजिक दायित्व से जोडा।"[४] हिंदी साहित्य के इतिहास पर दृष्टि डालें तो हम पाते हैं कि आलोचना ही नहीं बल्कि नाटक, निबंध, कविता जैसी अनेक विधाओं के उदय के कारणों की व्याख्या करें तो यह दिखाई देता है कि इसके गहरे सामाजिक सरोकार थे। भारतीय नवजागरण का साहित्य पर जो प्रभाव पड़ा उसने साहित्य और समाज रिश्ते को मजबूत किया।

वर्तमान में मीडिया समाज के लिए मजबूत कडी साबित हो रहा है। समाचार-पत्रों की प्रासंगिकता सदैव रही है और भविष्य में भी रहेगी। मीडिया में परिवर्तन युगानुकूल है, जो स्वाभाविक है। लेकिन भाषा की दृष्टि से समाचार-पत्रों में गिरावट देखने को मिल रही है। इसका बड़ा कारण यही लगता है कि आज के परिवेश में समृद्ध करने में समाचार पत्रों की महती भुमिका रही है, परंतु आज समाचार पत्रों ने ही स्वंय को साहित्य से दूर कर लिया है, जो अच्छा संकेत नही है। आज आवश्यकता है समाचार पत्रों में साहित्य का समावेश हो और वे आपनी परंपरा को समृध्द बनाए। वास्तव में पहले के संपादक समाचार पत्र को साहित्य से दूर नही मानते थे, बल्कि त्वरित साहित्य का दर्जा देते थे। अब न उस तरह के संपादक रहे, न समाचार-पत्रों में साहित्य के लिए स्थान। साहित्य मात्र साप्ताहिक छपने वाले सप्लीमेंट्स में सिमट गया है। समाचार पत्रों से साहित्य के लुप्त होने का एक बड़ा कारण यह भी है कि अब समाचार पत्रों में संपादक का दायित्व ऐसे लोग निभा रहे है, जिनका साहित्य से कभी कोई सरोकार नही रहा। समाचार-पत्रों के मालिकों को ऐसे संपादक चाहिए, जो उन्हें मोटी धनराशी कमाकर दे सकें, राजनीतिक गलियारे में उनकी पहुँच बढ़ सके।

इन सबके बीच कुछ समाचार पत्र ऐसे भी है, जो साहित्य
संजोए हुए है। साहित्य की अनेक पत्रिकाएँ भी प्रकाशित हो
परंतु उनके पास पर्याप्त संसाधन न होने के कारण उन्हें
समस्याओं का सामना करना पड़ता है। साहित्य ने सदैव
समाज को नई दिशा देने का कार्य किया है। साहित्य में समाज
खोज का एक तीसरा पक्ष है-'लेखक का व्यक्तित्व'। साहित्य
रूप में समाज की जो छाया प्रकट होती है वह लेखक के
के ही माध्यम से ही की जाती है। साहित्य के निर्माण में
की कड़ी लेखक के व्यक्तित्व का बहुत महत्व है। यह
बात में है की एक ओर इसका संबंध समाज से है तो दूसरी
साहित्य से। "साहित्य रचना की प्रक्रिया में समाज, लेखक
साहित्य परस्पर एक दूसरे को इस तरह प्रभावित करते है
से प्रत्येक क्रमश: परिवर्तित और विकसित होता रहता है-
से लेखक, लेखक से साहित्य और साहित्य से पुन:
साहित्य-रचना में जब हम लेखक के व्यक्तित्व का महत्व
करते हैं तो इसका अर्थ यह नहीं है कि वह स्वतंत्र और
इस संदर्भ में यह कहना उचित होगा कि लेखक की प्रतिभा
निश्चित परिस्थिति और परम्परा की उपज होती है। लेखक
विशिष्टता उसकी व्यक्तिगत इकाई के अतिरिक्त अधिकांशत
संबंधों और संबंधो क समझदारि पर निर्भर है।

साहित्य में समाज की अभिव्यक्ति और उसके स्वरूप
में मुक्तिबोध मानते है कि "साहित्यकार अपनी कृतियों
द्वारा जीवन की पुनर्रचना करता है। यह पुनर्रचित जीवन
भोगते हुए जीवन से मूलत: एक होते हुए भी पुनर्रचित
है।"[६] सभ्यता के विकास के साथ निरंतर जटिल होते
मानव स्वभाव को समझने के लिए समाजशास्त्रीय
जरूरत बढ़ती जा रही है।

वर्तमान समय में संपूर्ण विश्व में ज्ञान के क्षेत्र में एक
चेतना का मोड़ आया है। साहित्य सदैव संस्कृति के केंद्र में
लेकिन धीरे-धीरे यह सांस्कृतिक होता गया है। यहाँ
समाज के लगभग हर पहलू को संस्कृति से जोड़ा जाने
राजनीति भी संस्कृति के सहारे चल रही है। सांस्कृतिक
का मुख्य उद्देस्य है नैतिक बुनावट और कोमल भाव
पहचान करते हुए सामुहिक अर्थों का विवेचन क्योंकि

...र्गत भावनाएँ दुनिया पर शासन करती है। कुछ समय पहले ... कुछ सभ्यता के अंतर्गत आता था वह सब सांस्कृतिक का ... गया है। प्रो.पाण्डेय के अनुसार ''संस्कृति मनुष्य की ... है। वह मनुष्य की मनुष्यता और सामाजिक की अभिव्यक्ति ... रूप से मनुष्य का श्रम और सृजन मूर्तिमान होता है। ये ... और साकार रूप में व्यक्त होते है, आमतौर पर संस्कृति ... और धर्म से जोड़कर देखा जाता है, लेकिन व्यापक रूप ... समाज के सभी प्रतिकात्मक और प्रबुध्द क्रिया-कलापों ... स्कृतिक समझा जाता है। एडवर्ड टेलर ने कहा था कि ... एक समाज के ज्ञान, विश्वास, कला, नैतिकता, कानून ... रीति-रिवाज का समुच्चय है। संस्कृति संपूर्ण संजीवनी समाज ... संस्कृति से ही प्राप्त करता है।''[७] मैनेजर पाण्डेय ने संस्कृति ... जशास्त्र को भी काफी गंभीरता से विश्लेषित किया है। वे ... ति' को भारतीय परंपरा का शब्द न मानकर इसे अँग्रेजी के ... र' का अनुवाद बताया है। उन्होंने बताया कि हमारे यहाँ ... ता' शब्द संस्कृत में मिलता है। कुछ समय के बाद 'सभ्यता' ... न पर संस्कृति का प्रयोग अधिक होने लगा और आज ... न में है।

... स्कृति के समाजशास्त्र को परंपरा से जोड़ते तथा विश्लेषित ... हुए पाण्डेय जी कहते हैं कि-''संस्कृति के समाजशास्त्र का ... है परंपरा का विश्लेषण। प्राय: परंपराएँ समाज की होती ... आओं की होती है और साहित्य की भी होती है जो मिलजुलकर ... का विशिष्ट स्वरूप निर्मित करती है।'' इन सभी के बोध ... क्रिया में चयन, संग्रह और त्याग की दृष्टि होती है जो मूलत: ... क होती है।

... की पराधीनता के यथार्थ तथा आदिवासी संस्कृति के चित्रण ... साहित्य में असंभ्य है लेकिन क्य कोई इनकी संस्कृति की ... करता है, जबकि वे भारतीय संस्कृति के अंग है। पाण्डेय जी ... आक्रोशीत होकर प्रश्न करते है कि- ''क्या भारतीय समाज ... की पराधीनता के यथार्थ और स्वाधीनता की आकांक्षा की ... व्यक्ति को भारतीय संस्कृति के समाजशास्त्र में जगह मिलेगी? ... केवल सीता और सावित्री के पातिव्रत्य का गुणगान और सती ... महिमा का मंडन ही होगा।''[९] जिस प्रकार भक्तिकाल में सभी ... , संस्कृति और जातियों ने मिलकर उसे स्वर्ण युग के स्थान तक पहुँचाया था, आज भी आवश्यकता कुछ वैसी ही है यानी कि सर्वसमावेशी सांस्कृतिक, सामाजिक एकता की।

संदर्भ :-

१) मैथिलीशरण गुप्त - भारत - भारती

२) अज्ञेय-साहित्य-संस्कृति और समाज परिवर्तन की प्रक्रिया

३) मैनेजर पाण्डेय-साहित्य के समाजशास्त्र की भुमिका पृ.१३

४) विश्वनाथ त्रिपाठी-आलोचना का सामाजिक दायित्व, आलोचना अंक-३६, नवांक पृ.२३

५) नामवर सिंह : इतिहास और आलोचना - पृ. ३७-३८.

६) वही वही - पृ.३७-३८

७) समकालीन जनमत - पृ.८०

८) संकलित निबंध - पृ.२०३

९) वही - पृ.२१३

--*